RESEARCH ARTICLE

विधिना | Vidhina

ISSN: (Online): 3049-3986

Publishing Today, Inspiring Tomorrow

Published Online | Special Issue. | Nov.2025 | pp.173-178

Quarterly, Multilingual, Multidisciplinary, Peer-Reviewed E-Research Journal

'राजधर्म और लोकतंत्र: एक तुलनात्मक अध्ययन और संयोजन की संभावना'

*Pushkar Mishra
Department Of Ancient Indian History & Archeology , University Of Lucknow

सारांश:

'राजधर्म' प्राचीन भारतीय राजनीतिक दर्शन की एक मूलभूत अवधारणा है, जो शासक के कर्तव्यों को परिभाषित करती है। यह महाभारत के शांतिपर्व, मनुस्मृति, कौटिल्य के अर्थशास्त्र और अन्य ग्रंथों में वर्णित है, जहां शासक को प्रजा की रक्षा, न्याय, समानता और कल्याण सुनिश्चित करने का दायित्व सौंपा गया है। राजधर्म में राजपद को दैवीय प्रतिनिधि माना गया, जो धर्म और नैतिकता का पालन करते हुए राज्य का संचालन करता है। इसके विपरीत लोकतंत्र एक आधुनिक शासन प्रणाली है, लोकतंत्र में यह सुनिश्चित किया गया कि लोग ही तंत्र का हिस्सा हों, जिसमें जनता की भागीदारी, समानता, कानून का शासन और निर्वाचन प्रतिनिधित्व प्रमुख सिद्धांत हैं।

यह शोध पत्र राजधर्म और लोकतंत्र के बीच समानताओं और अंतरों का तुलनात्मक विश्लेषण करता है तथा उसके संयोजन की संभावना को खोजता है, विशेष रूप से, भारतीय संदर्भ में। समानताओं में जनकल्याण का उद्देश्य प्रमुख है; राजधर्म में शांतिपर्व के 'प्रजा सुखे राज्ञः सुखम' का सिद्धांत, लोकतंत्र के 'जनता द्वारा, जनता के लिए' से मेल खाता है। दोनों में न्याय और समानता पर जोर दिया गया है, लेकिन राजधर्म; नैतिक और दिव्य आधार पर टिका है, जबकि लोकतंत्र; कानूनी और जन-भागीदारी पर। अंतरों में राजधर्म का वंशानुगत और व्यक्तिगत स्वरूप है, जबकि लोकतंत्र निर्वाचित और सामूहिक है। भारतीय संविधान में राजधर्म के तत्व, जैसे मौलिक अधिकार और न्यायिक स्वतंत्रता आधुनिक लोकतंत्र के साथ एकीकृत है। आधुनिक भारत में राजधर्म की प्रासंगिकता नैतिक शासन, भ्रष्टाचार विरोधी और जन-केंद्रित नीतियों में दिखाई पड़ती है। उदाहरण स्वरूप गांधी ने भी राजधर्म को लोकतंत्र से जोड़ा और कहा कि 'राजधर्म का पालन ही सच्ची स्वतंत्रता है'।

प्रमुख शब्द: राजधर्म, महाभारत, अर्थशास्त्र, नैतिक शासन, जनकल्याण, लोकतंत्र, प्रासंगिकता।

Article Publication

Published Online -November 2025

Corresponding Author

Pushkar Mishra
Department Of Ancient Indian History & Archeology , University Of Lucknow

Email- mishrapushkar70@gmail.com

© 2025 - published by *Vidhina*

This is an open access article under the CC BY-NC 4.0

परिचय

राजधर्म और लोकतंत्र दो ऐसी अवधारणाएं हैं, जो शासन की नींव पर आधारित है, लेकिन इनके उत्पत्ति, विकास एवं क्रियान्वयन अलग-अलग संदर्भ में हुए हैं। राजधर्म प्राचीन भारतीय इतिहास एवं दर्शन का हिस्सा है, जो शासक के कर्तव्यों को परिभाषित करता है, यह अवधारणा वेदों, उपनिषदों, महाकाव्यों और नीतिशास्त्रों में पाई जाती है। महाभारत के शांति पर्व के 'राजधर्मानुशासन' में पितामह भीष्म युधिष्ठिर को राजधर्म की शिक्षा देते हुए कहते हैं कि राजा को धर्म परायण होना चाहिए।[1] मनुस्मृति में राजा को विष्णु का अंश कहा गया है, जहां राजधर्म को धर्म और शासन के बीच संतुलन के रूप में देखा गया। इसमें राजा को दंड और न्याय का उपयोग बताया गया है।[2] कौटिल्य के अर्थशास्त्र में राजधर्म को व्यावहारिक रूप दिया गया है, जहां राज्य के सात तत्वों अर्थात सप्तांक सिद्धांतों स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, दंड, मित्र का संचालन वर्णित है।[3] वहीं लोकतंत्र की जड़े प्राचीन ग्रीक सभ्यता में है, विशेष रूप से एथेंस में, जिसे पांचवीं शताब्दी ईसा पूर्व में स्थापित किया

RESEARCH ARTICLE

विधिना | Vidhina

ISSN: (Online): 3049-3986

Publishing Today, Inspiring Tomorrow

Published Online | Special Issue. | Nov.2025 | pp.173-178

Quarterly, Multilingual, Multidisciplinary, Peer-Reviewed E-Research Journal

गया। वहां पुरुष नागरिक सभाओं में निर्णय लेते थे।[4] भारत में लोकतंत्र की जड़े भी प्राचीन है, गणराज्य; वैशाली और लिच्छवी में जन भागीदारी थी, जो एथेंस से प्राचीन थी।[5]

21वीं शताब्दी में लोकतंत्र संकट में है, धन, बल, ध्रुवीकरण, भ्रष्टाचार, नैतिक पतन के कारण जनता में अविश्वास बढ़ रहा है। विश्व लोकतंत्र सूचकांक (2024) के अनुसार 53 प्रतिशत देशों में लोकतंत्र कमजोर हुआ है,[6] ऐसे कई उदाहरण हमें अपने पड़ोसी देशों में भी देखने को मिलते हैं। विगत वर्षों में बांग्लादेश, नेपाल, श्रीलंका जैसे देशों में शासन के प्रति अविश्वास और भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलनों ने सत्ता परिवर्तन का काम किया है। नेपाल में तो आए दिन राजतंत्र की मांग जोर पकड़ती रहती।[7] ऐसे में राजधर्म— जो प्राचीन भारतीय बुद्धि का सार है, नैतिक शासन का वैकल्पिक मॉडल प्रस्तुत कर सकता है।

इस शोध पत्र का उद्देश्य राजधर्म और लोकतंत्र के बीच समानताओं, अंतरों और उनके परस्पर संबंधों का विश्लेषण करना है। विशेष रूप से भारतीय संदर्भ में यह देखना है कि कैसे राजधर्म के सिद्धांत, भारतीय लोकतंत्र और संविधान में प्रतिबिंबित होते हैं। आधुनिक समय में भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में राजधर्म की प्रासंगिकता महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह नैतिक शासन को प्रोत्साहित करता है। शोध पत्र में प्राचीन ग्रंथो, आधुनिक स्रोतों और तुलनात्मक अध्ययनों का उपयोग किया गया है। यह मुख्यतः पांच भागों में विभाजित है, राजधर्म की अवधारणा, लोकतंत्र की अवधारणा, तुलनात्मक विश्लेषण एवं संयोजन की संभावना और आधुनिक प्रासंगिकता। अंत में निष्कर्ष और संदर्भ दिए गए हैं।

राजधर्म की अवधारणा

प्रमुख ग्रंथों में राजधर्म और ऐतिहासिक विकास—

राजधर्म जिसका सामान्य अर्थ 'राजा का धर्म' अर्थात शासक के कर्तव्यों से है। प्राचीन भारत में कई प्रकार के राज्यों के अस्तित्व मिलते हैं, किंतु यह निर्विवाद सत्य है कि शासन की राजतंत्र प्रणाली सर्वमान्य और सर्वप्रचलित थी, जिसमें राजधर्म शासन का आधार था। 'राजपद' की अवधारणा वैदिक काल से ही मिलने लगती है, ऋग्वेद में प्रजा के रक्षक को 'राजन' कहा गया है।[8] एतरेय ब्राह्मण में उल्लेख है कि देवताओं ने असुरों से युद्ध जीतने के लिए सोम को अपना राजा बनाया [9] तैतरीय ब्राह्मण में कहा गया है कि देवताओं में सबसे श्रेष्ठ, यशस्वी और शक्तिशाली होने के कारण इंद्र, देवताओं के अधिपति चुने गए और उन्हें प्रजा की रक्षा का दायित्व दिया गया।[10] महाभारत में उल्लेख है कि "दंड धारक राजा पृथ्वी पर न होता तो सबल निर्बल का भक्षण उसी प्रकार करते जिस प्रकार जल में बड़ी मछली छोटी मछली का भक्षण करती है"।[11] कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी इसी प्रकार का मत व्यक्त किया गया है कि व्यवस्था के अभाव में मात्स्य न्याय की स्थिति उत्पन्न होती है।[12] अर्थशास्त्र के प्रथम अधिकरण के 13वें अध्याय में दो गुप्तचर राजा के दैवीय उत्पत्ति पर चर्चा करते हैं। बौद्ध ग्रंथ दीघनिकाय और जैन ग्रंथ आदि पुराण में भी उल्लेख है कि समाज में अव्यवस्था व्याप्त होने पर योग्य पुरुष का जन्म हुआ। मनुस्मृति में राजा और राजा की दैवीय उत्पत्ति का विवरण दिया गया, जिसमें कहा गया है कि "इस संसार को बिना राजा के होने पर बलवानों के डर से प्रजा के इधर-उधर भागने पर संपूर्ण चराचर की रक्षा के लिए ईश्वर ने राजा की सृष्टि की"।[13] इस प्रसंग में यह उल्लेखनीय है कि प्राचीन भारत में 'राजपद' दैवीय माना जाता था न कि उसको ग्रहण करने वाला व्यक्ति। प्राचीन शास्त्रकारों ने राजत्व में देवत्व का लोपन केवल उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाने के उद्देश्य से ही किया, ताकि उसके विरुद्ध बारंबार विद्रोह न हो तथा प्रजा शासक का सम्मान करें। रामायण में राजा दशरथ राम को राजधर्म का पाठ पढ़ाते हुए कहते हैं कि 'एक राजा का अपना कुछ नहीं होता सब कुछ राज्य का होता है, अपितु आवश्यकता पड़ने पर यदि राजा को अपने राज्य और प्रजा के हित में अपना परिवार, यहां तक की अपने प्राण त्यागने पड़े तो संकोच नहीं करना चाहिए, क्योंकि राज्य ही उसका मित्र है, राज्य ही उसका परिवार है'।[14] कामंदकीय नीतिसार में उल्लेख है कि 'जिस प्रकार सूर्य अपनी किरणों से थोड़ा-थोड़ा जल ग्रहण करता है, उसी प्रकार राजा को प्रजा से कम से कम कर प्राप्त करना चाहिए'।[15] शुक्राचार्य की शुक्रनीति में शासन–व्यवस्था का जैसा विस्तृत विवरण मिलता है, वैसा अर्थशास्त्र के अतिरिक्त किसी अन्य ग्रंथ में नहीं मिलता। यह ग्रंथ राजतंत्र का ही समर्थन एवं वर्णन करता है। शुक्रनीति के अनुसार अनुशासन के अभाव में राजा तथा राज्य का विनाश हो जाता है। शुक्रनीति में कहा गया है कि राज्य का उद्देश्य प्रजा की रक्षा करना है। शुक्र प्रजा को सलाह देते हैं कि वह गुण तथा नैतिकता से विहीन राजा का बहिष्कार कर दे। ए. एस. अल्तेकर जैसे विद्वान राज्य की उत्पत्ति का प्रश्न ऐतिहासिक दृष्टिकोण से हल करते हैं, उनके अनुसार आर्य जातियों में पितृसत्तात्मक संयुक्त परिवार के बीज से ही क्रमशः राज्य संस्था की उत्पत्ति हुई।[16]

RESEARCH ARTICLE

विधिना | Vidhina

ISSN: (Online): 3049-3986

Publishing Today, Inspiring Tomorrow

Published Online | Special Issue. | Nov.2025 | pp.173-178

Quarterly, Multilingual, Multidisciplinary, Peer-Reviewed E-Research Journal

राजधर्म के मूल सिद्धांत—

1. प्रजा रक्षा (आंतरिक एवं बाह्य)
2. समान न्याय प्रशासन
3. कर संग्रह (न्यूनतम)
4. जनकल्याण कार्य (शिक्षा, स्वास्थ्य, धर्म)
5. धर्म पालन (व्यक्तिगत और सामाजिक)
6. आपात प्रबंधन (दुर्भिक्ष और युद्ध)
7. परामर्श (आमात्य, विद्वान)
8. आत्म संयम (शासक का व्यक्तिगत जीवन)
9. सामाजिक एकता (धर्म और जाति समन्वय)

राजधर्म की सीमाएं—

1. वंशानुगत शासन (योग्यता की कमी)
2. दिव्यता का दावा (निरंकुशता का खतरा)
3. जाति व्यवस्था (असमानता)

लोकतंत्र की अवधारणा

लोकतंत्र आधुनिक काल की सबसे लोकप्रिय शासन प्रणाली है, इसमें शक्ति जनता के हाथ में निहित होती है। आज विश्व भर के अधिकत्तर देश लोकतंत्र के मार्ग पर अग्रसर है। कई अन्य प्रकार की शासन पद्धति में, लोकतंत्र सबसे उत्तम माना जाता है, जनता की सीधी भागीदारी, समानता और कानून का शासन इसके प्रमुख सिद्धांत हैं। इसका उद्भव प्राचीन एथेंस में पांचवीं शताब्दी ईसा पूर्व में हुआ, जहां क्लेइस्थेनेस ने इसे स्थापित किया, यहां पुरुष सभाओं में निर्णय लेते थे।[17] किंतु भारत में प्राचीन लोकतंत्र की जड़े इससे भी पुरानी हैं। छठी शताब्दी ईसा पूर्व अर्थात बुद्ध काल में भारत में गंगा घाटी के कई गणराज्य ऐसे थे, जहां लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था के प्रमाण मिलते हैं।[18] उस अवधि में यहां पर विभिन्न प्रकार के समितियों, सभाओं और गणों की चर्चा मिलती है। भारतीय साहित्य के अतिरिक्त यूनानी–रोमन लेखकों के विवरण भी प्राचीन भारत में गणराज्य के अस्तित्व को यूनान के गणतंत्र से पहले का प्रमाणित करते हैं। सिकंदर के आक्रमण के समय पश्चिम भारत में कई गणराज्य ऐसे थे, जो राजतंत्र से भिन्न थे,[19] मालव, यौधेय, अर्जुनायन आदि अनेक गणराज्यों के सिक्कों पर राजा का उल्लेख न होकर 'गण' का उल्लेख मिलता है। किंतु यहां पर यह जानना आवश्यक है कि प्राचीन भारत के गणतंत्र आधुनिक काल के गणतंत्र से भिन्न थे, आधुनिक काल के गणतंत्र "प्रजातंत्र" का समानार्थी है, जिसमें अंतिम शक्ति जनता में निहित होती है। प्राचीन काल के गणतंत्र को आधुनिक शब्दावली में 'कुलीनतंत्र 'कहना अधिक उचित प्रतीत होता है।

आधुनिक युग में लोकतंत्र का आरंभ 17वीं शताब्दी में ब्रिटेन की क्रांति से माना जाता है, किंतु इससे भी पहले लोकतंत्र की आधुनिक परिकल्पना 1215 ई. में रचित इंग्लैंड के मैग्नाकार्टा के माध्यम से विकसित हो चुकी थी। ब्रिटेन की क्रांति के बाद अमेरिका स्वतंत्रता संग्राम (1776) और फ्रांसीसी क्रांति (1789) ने आधुनिक लोकतंत्र को जन्म दिया। 20वीं शताब्दी में दो विश्व युद्ध के बाद संयुक्त राष्ट्र चार्टर (1945) ने लोकतंत्र को वैश्विक मूल्य माना।

भारत में आधुनिक लोकतंत्र की स्थापना स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1950 ई. में भारतीय संविधान को अंगीकार कर हुई, यह संविधान विश्व का सबसे बड़ा लिखित संविधान है, जो सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार पर आधारित है। संघीय ढांचा, मौलिक अधिकार, नीति निर्देशक तत्व और

RESEARCH ARTICLE

विधिना | Vidhina

ISSN: (Online): 3049-3986

Publishing Today, Inspiring Tomorrow

Published Online | Special Issue. | Nov.2025 | pp.173-178

Quarterly, Multilingual, Multidisciplinary, Peer-Reviewed E-Research Journal

स्वतंत्र निर्वाचन पद्धति इसके प्रमुख स्तंभ है। इसके अतिरिक्त भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में शांतिपूर्ण सत्ता हस्तांतरण लोकतंत्र को सफल बनाने का काम किया है। 2024 के लोकसभा चुनाव में 66 प्रतिशत मतदान दर इसकी जीवंतता को दर्शाती है।[20]

लोकतंत्र के मूल सिद्धांत —

1. जनता की संप्रभुता— शासन की अंतिम शक्ति जनता में निहित होती है।
2. समानता और स्वतंत्रता— सभी नागरिकों को मताधिकार, अभिव्यक्त की स्वतंत्रता और कानून के समक्ष समानता।[21]
3. कानून का शासन— कोई व्यक्ति कानून से ऊपर नहीं।
4. शक्ति का पृथक्करण— विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका।
5. बहुमत का शासन— अल्पमत के अधिकारों की रक्षा।
6. जवाबदेही और पारदर्शिता— चुने हुए प्रतिनिधि जनता के प्रति जिम्मेदार।

लोकतंत्र की चुनौतियां एवं भविष्य—

1. लोकलुभावनवाद
2. धन का प्रभाव
3. भ्रष्टाचार
4. ध्रुवीकरण
5. आर्थिक असमानता
6. जलवायु परिवर्तन
7. फेक न्यूज़ और डिजिटल खतरे

भविष्य —डिजिटल युग में ई-गवर्नेंस और सोशल मीडिया, लोकतंत्र को और पारदर्शी बनाकर मजबूत कर सकता है।

तुलनात्मक विश्लेषण और संयोजन की संभावना

समानताएं—

राजधर्म और लोकतंत्र में कई समानताएं हैं— दोनों में जनकल्याण प्रमुख है, राजधर्म— राजा, प्रजा के हित में कार्य करता है, जैसा कि महाभारत में 'प्रजा सुखे राज्ञः सुखम' का उल्लेख मिलता है, लोकतंत्र में भी सरकार जनता के लिए कार्य करती है। दूसरा न्याय और समानता— राजा को धर्म के अनुरूप सभी के साथ समान व्यवहार करना होता है, जैसा मनुस्मृति में वर्णित है। वहीं लोकतंत्र में समानता का मौलिक सिद्धांत है, तीसरा जवाबदेही— राजधर्म में राजा धर्म से बंधा होता है, जबकि लोकतंत्र में चुनाव से। दोनों में प्रजा रक्षा प्रमुख है।

अंतर—

राजधर्म और लोकतंत्र में अंतर भी स्पष्ट है; राजधर्म में शासक वंशानुगत होता है और राजपद दैवीय माना जाता है, जबकि लोकतंत्र में निर्वाचन प्रणाली है। राजधर्म नैतिकता और धर्म पर आधारित है, जबकि लोकतंत्र कानून और संविधान पर। राजधर्म में राजा का अंतिम निर्णय होता है, लेकिन लोकतंत्र में बहुमत का। राजधर्म व्यक्तिगत है, वहीं लोकतंत्र सामूहिक। राजधर्म में राजा प्रजा के पिता तुल्य है, जबकि लोकतंत्र में सरकार जनता की सेवक। दोनों में सलाह प्रक्रिया में समरूपता है; राजधर्म में "सभासद" जबकि लोकतंत्र में "संसद" महत्वपूर्ण है।

संयोजन की संभावना—

आधुनिक लोकतंत्र में राजधर्म का संश्लेषण नैतिक लोकतंत्र को जन्म दे सकता है और आदर्श शासन बन सकता है। राजधर्म कर्तव्य केंद्रित, नैतिक एवं पदानुक्रमित है, जबकि लोकतंत्र अधिकार केंद्रित, संस्थागत और समतावादी है। दोनों का अंतिम लक्ष्य जनकल्याण है। किंतु

RESEARCH ARTICLE

विधिना | Vidhina

ISSN: (Online): 3049-3986

Publishing Today, Inspiring Tomorrow

Published Online | Special Issue. | Nov.2025 | pp.173-178

Quarterly, Multilingual, Multidisciplinary, Peer-Reviewed E-Research Journal

राजधर्म शासकों पर निर्भर करता है, वहीं लोकतंत्र प्रक्रिया पर। दोनों का संयोजन, जिसमें राजधर्म से नैतिकता और लोकतंत्र से भागीदारी इसका मिश्रण हो सकता है।

आधुनिक प्रासंगिकता

गांधी ने राम राज्य को नैतिक शासन के लिए आदर्श माना है, वे कहते हैं कि 'यदि शासक राजधर्म भूल जाएगा, तो स्वराज दासता बन जाएगा'। हरिजन में लिखते हैं कि 'राजधर्म का पालन करना ही सच्ची स्वतंत्रता है'[22] आधुनिक भारत में, लोक कल्याणकारी राज्य (अनुच्छेद 38) राजधर्म से प्रेरित है। भारतीय संविधान में लोकतांत्रिक ढांचा के साथ राजधर्मीय मौलिक कर्तव्यों का शंकर रूप (अनुच्छेद 51A) मौजूद है।[23] आधुनिक भारत में नैतिक शासन की आवश्यकता ने राजधर्म की प्रासंगिकता बढ़ाई है। भ्रष्टाचार विरोधी और नैतिक सुशासन हेतु जनप्रतिनिधियों द्वारा सेवा भाव का राजधर्म अपनाया जा सकता है। सर्वधर्म समभाव और समावेशी विकास नीतियों को अपना कर ध्रुवीकरण और असमानता जैसी चुनौतियों को दूर किया जा सकता है।

निष्कर्ष

प्राचीन ग्रंथों और समसामयिक विश्लेषणों के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि दोनों अवधारणाओं में जनकल्याण और न्याय साझा हैं। राजधर्म नैतिकता प्रदान करता है, जबकि लोकतंत्र भागीदारी। अतः दोनों का संयोजन आधुनिक शासन को और अधिक मजबूत, न्यायपूर्ण तथा समावेशी बना सकता है, विशेष रूप से, भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में। वहीं वैश्विक स्तर पर राजधर्म लोकतंत्र को नैतिक मूल्य प्रदान कर सकता है। आधुनिक चुनौतियां जैसे भ्रष्टाचार, असमानता, ध्रुवीकरण से राजधर्म की प्रासंगिकता बढ़ी है। विगत वर्षों में दुनिया के कई देशों, जिसमें भारत के पड़ोसी देश भी शामिल हैं, में शासन पर संकट और सत्ता परिवर्तन देखने को मिला है, ऐसे आधुनिक संकटों में राजधर्म और लोकतंत्र का संयोजन महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। गांधी का राजधर्म दर्शन एक नैतिक, विकेंद्रित, सेवा आधारित और अहिंसक शासन मॉडल है, जो प्राचीन भारतीय बुद्धि और आधुनिक लोकतंत्र का संश्लेषण है। यह केवल शासकों के लिए नहीं, बल्कि हर नागरिक के लिए एक जीवन पद्धति है। गांधी का राजधर्म कहता है कि 'शासक नहीं, सेवक बानो'। राजधर्म का यह दर्शन न केवल भारत बल्कि वैश्विक लोकतंत्र के संकट में भी एक नैतिक मार्गदर्शक हो सकता है। लोकतंत्र में विधि निर्माताओं को यह सुझाव दिया जाना चाहिए कि नेतृत्व प्रशिक्षण में राजधर्म और स्कूल पाठ्यक्रम में प्राचीन शासन पद्धति को शामिल किया जाए।

संदर्भ:

1. दत्त, एम.एन. (1903). महाभारत : शांतिपर्व. एलिसियम प्रेस,कलकत्ता।
2. शर्मा, अरविंद (2005). आधुनिक हिंदू विचार: एक परिचय. पृष्ठ.186
3. शामासस्त्री, आर.(1915). अनुवाद, कौटिल्य अर्थशास्त्र।
4. विल्सन, एन.जी. (2006). प्राचीन ग्रीस का शब्दकोश. पृष्ठ. 511
5. रिज़डेविडस (1903). बुद्धिस्ट इण्डिया. पृष्ठ. 13
6. इकोनॉमिस्ट इंटेलिजेंस यूनिट, लोकतंत्र सूचकांक रिपोर्ट, 2024
7. पांडेय,साक्षी. जागरण न्यूज़, 10 सितम्बर 2025
8. ऋग्वेद. मंडल 10, सूक्त 173
9. ऐतरेय ब्राह्मण, 1, 4
10. तैतरीय ब्राह्मण 2.2.
11. महाभारत: शांतिपर्व. 12, 67,16
12. कौटिल्य अर्थशास्त्र: प्रथम अधिकरण, सर्ग 4
13. मनुस्मृति, अध्याय VII, पृष्ठ.3–4

विधिना | Vidhina

ISSN: (Online): 3049-3986

Publishing Today, Inspiring Tomorrow

Published Online | Special Issue. | Nov.2025 | pp.173-178

Quarterly, Multilingual, Multidisciplinary, Peer-Reviewed E-Research Journal

14. धर्म डेस्क, अमर उजाला, 17 अप्रैल 2020.
15. कामंदकीय नीतिसार, सर्ग 4, प्रथम प्रकरण।
16. अल्तेकर, ए. एस : स्टेट एण्ड गवर्मेंट इन ऐशेयंट इंडिया. पृष्ठ.34
17. विल्सन, एन.जी. (2006), प्राचीन ग्रीस का शब्दकोश. पृष्ठ. 511
18. रिज़डेविडस (1903), बुद्धिस्ट इण्डिया. पृष्ठ. 13
19. रायचौधरी, हेमचंद्र(1923), पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ इंडिया. पृष्ठ.245
20. इलेक्शन कमीशन ऑफ इंडिया, रिपोर्ट 2024
21. मिल, जॉन. स्टुवर्ट (1859). ऑन लिबर्टी।
22. गांधी, एम. के.(1946), हरिजन।
23. भारतीय संविधान, अनुच्छेद 51A